राज हीरामन जी का साक्षात्कार

डॉ॰ अनुपमा तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर,हिन्दी
अलायंस विश्वविद्यालय, बंगलोर
फोन – 8886995593/8142623426
ईमेल – anupama.tiwari@alliance.edu.in

(आदरणीय राज हीरामन जी मॉरीशस के लब्ध प्रतिष्ठित कवि हैं। आपका पूरा नाम धानपाल हीरामन है और आपका जन्म 11 जनवरी 1953 में मॉरीशस में हुआ। 'बसंत' और 'रिमझिम' जैसी पत्रिकाओं के संपादक रह चुके हैं। अब तक आपकी कुल 22 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कविता संग्रह, कहानी संग्रह, साक्षात्कार, लघु कथा, हायकू, यात्रा वृतांत, संस्मरण, डायरी आदि विधों पर आपकी पुस्तकें प्रकाशित हैं। आपकी रचनाओं पर भारत में कई शोध कार्य सम्पन्न हुये हैं। राज हीरामन जी मधुर एवं आत्मीय स्वभाव, गंभीर अध्ययन, साधनामय तथा निश्छल जीवन, हिन्दी अनुराग एवं भारत से प्रेम करने वाले अक्षर पुरुष हैं। प्रस्तुत है उनके साथ बातचीत के कुछ अंश -)

प्र. – 1- मॉरिशस को लघु भारत कहा जाता है, आप इससे सहमत है ? लघु भारत में भारत की कौन सी छवि है जो कडी को जोडे रखी है ?

जवाब – (ठहाके भरते हुये) , अनुपमा इस प्रश्न का जवाब पहले आप मुझे दें , फिर मैं आपको दूंगा। देखिए जितने भारतीय शैलानी , कलाकार , साहित्यकार, पत्रकार , व्यापारी या कोई भी इस नीले पानी के देश में आते हैं उन सबको यहां भारत और भारतीयता दिखती है ,इस कारण जब वे वापस जाते हैं तो अपनी स्मृतियों में जो कुछ संजो कर ले जाते हैं उस आधार पर वे इसे लघु भारत कहते हैं , और जब आप सब इसे लघु भारत मानते हैं तो मैं भी इससे पूर्ण रूप से सहमत हूं। मुझे तो लगता है कि यह एक घर है जहां हम एक कमरे से दूसरे कमरे में आते – जाते रहते हैं। इस देश में भारतीयता है – बात चीत में ,रहन – सहन में , आचार – व्यवहार में, खान-पान में , वेश –भूषा में ,चेहरे की बनावट में , चमडे के रंग में ,बालों के रंग में ,संस्कृति में , सभ्यता में। सबमे आपको भारत ही दिखाई देगा। इसी के आधार पर आपके देश वाले ऐसा मानते हैं और उनके ऐसा मानने से हम सब प्रसन्न होते हैं कि एक एकता के सूत्र में जुडे रहने का साक्ष्य है यह धारणा।

एक और बात , आपने हनुमान चालीसा देखी है ? वह ऐसे खुलती है जैसे सन्दूक खुलती है। हनुमान चालीसा पुस्तक की तरह नहीं खुलती बल्कि डाउन टू अप , खुलती है। और आप तो जानती हैं कि सन्दूक में हम कितना कीमती सामान रखते हैं , गहने , संपत्ति के कागजात , धरोहर की पुस्तकें अर्थात बहुमूल्य वस्तुएं आदि। इस प्रकार सन्दूक हमारा कोश होता है। हनुमान चालीसा भी हमारे लिए एक कोश की ही तरह है। हमारे पूर्वज हनुमान चालीसा अपने संग लाए , उसे संजो कर रखे ,आज तक वही धरोहर हमारी संस्कृति में व्यवहृत है। हमारे लिए वही हमारा मूल मंत्र बना हुआ है , इसी मंत्र के अनुकरण से इस द्श में लोगों को भारत और भारतीयता की छवि दिखाई देती है। इतने दुख , यातना ,उपेक्षा, भर्त्सना ,कष्ट सह कर भी हमने इसे बचा कर रखा है और इसी से सब सीखा , सब पाया। हमारा संकल्प वहीं से आरम्भ हुआ जो भारत और भारतीयता का संकल्प है। कुछ मायने में तीज –पर्व , व्रत – त्यौहार सब भारत के ही मनाए जाते हैं इसीलिए शायद लोग अचम्भित हो जाते हैं यहां की संस्कृति को देखकर। होली आपके यहां भी मनाई जाती है यहां भी। पर आपकी होली रंगों और उत्साह की होली है जबकि हमारे यहां कि होली मे रंग तो है पर इन रंगों में कडा त्याग , बलिदान , पूर्वजों के पसीने का रंग , अपमान भरे चेहरे की लालिमा का रंग , यातना के रंग का सम्मिश्रण होता है जिससे यहां की होली का रंग और अधिक चटक बन जाता है, जो परस्पर एक दूसरे के उपर पडते ही सबको अतीत से वर्तमान के रंग में डुबोकर सराबोर कर देती है।

दीवाली भारत में रोशनी प्रदान करती है तथा लक्ष्मी की आराधना का प्रतिफल प्राप्त होता है जबकि हमारे यहां की दीवाली दासता से मुक्ति की लव प्राप्त करने की दीवाली है।

गान्धीवाद आपके यहां भी है हमारे यहां भी। गान्धी भारत में ही जन्मे , मरे , अहिंसा का मंत्र दिये , देश को आजाद कराए फिर भी आज गान्धी के मायने भारत में बदल गये हैं, जबकि हमारे देश में गान्धी बस कुछ समय के लिए आए थे ,उनकी एक एक बात नींव बनी है। उनके शब्दों को मूल मंत्र माना गया है और आज भी गान्धी बदले नहीं हैं। भारत के राजनेता , साहित्यकार, कलाकार , पत्रकार सबको हम दिल से लगाए हुए हैं , उन्हीं से संस्कृति प्राप्त होती है और आज भी उसी आधार पर हमारे भविष्य का निर्माण हो रहा है। इस आधार पर सगर्व कह सकता हूं कि भारत – भारतीयता आपकी ही नहीं हमारी भी है। जो सन्दूक हम साथ में लाए थे सामान भले थोडे बहुत बदल गए हैं परंतु सन्दूक नहीं बदला है क्योकि संजोया हुआ खजाना सही दिशा अवलोकित करती है तथा एक निश्चित मार्ग पर ले जाती है।

प्र. 2- आप सन 1996 के पूर्व से ही काव्य सृजन में रत हैं , यह सरस्वती की आप पर अनुकम्पा ही है , परंतु यह जानने की जिज्ञासा है कि – क्या किसी विशेष साहित्यकार के विचार से भी प्रभावित हुए हैं ?

जवाब – जी मै मानता हूं कि बहुत देर से लिखना शुरू किया पर आप इस बात से भी अवगत हैं कि मैं भारत की कई पत्रिकाओं में काम कर चुका हूं पर एक पत्रिका में कई वर्ष कार्य करने के पश्चात भी उस सम्पादक ने मेरी एक भी कविता नहीं नहीं छापी। उनका नाम और पत्रिका का नाम लेना उचित नहीं समझ रहा हूं पर यह कह सकता हूं कि यदि मेरी रचनाएं सही समय पर प्रकाशित हुई होतीं तो मैं शायद 1996 से दस ,पन्द्रह वर्ष पूर्व ही कवि बन सकता था। पर किसी ने मेरी रचनाओं को छापा भी नहीं और प्रकाशित कराने के लिए मैने कभी किसी की पैरवी भी नहीं की।

मैं हिन्दी के कई साहित्यकारों से प्रभावित हूं। स्कूल के समय में छायावाद के चतुष्टय कवि मुझे मुह जुबानी याद रहते। आधुनिक के कवि अज्ञेय , धर्मवीर भारती आदि भी मुझे बहुत प्रभावित किये। मैं कह सकता हूं कि सबका अपना – अपना वैशिष्ट्य है। परंतु एक कवि ऐसे भी हैं जिनकी कुछ पंक्तियों ने मुझे कभी अकेले होने ही नही दिया। खुशी में , दुख में , प्रतिकूल समय में हमेशा मेरी सम्बल बनी रहीं। चन्द पंक्तियां आपको सुनाना चाहूंगा इस आशा से कि शायद आप भी प्रभावित हों –

पडे मुसीबत इतनी मुझपर , सभी मुसीबत कम हो जाए

थके न दिल की जवानी चाहे सांस खतम हो जाये

दुख की ज्वाला में तप तप कर खून भी इत्ना गरम हो जाये
कि पर्वत पर भी पांव धरूं तो वो भी जरा कुछ नरम हो जाये

है स्वार्थ का धन ऐसा धन , जो निर्धन से छीना होता है

और त्याग के आंसूं मे6 भी सावन का महीना होता है

आलस मे जियें , अमृत भी पियें , वह खून का पीना होता है

मेहनत का पसीना जब जब गिरता , कंकण भी नगीना होता है।

निर्दल तिवारी जी की इस कविता से मैं बहुत अधिक प्रभावित हूं। इसके साथ ही बुद्ध साहित्य्से बहुत अधिक प्रभावित हूं , बहुत किताबें पढता हूं और ओशो का भक्त हूं मुक्तिबोध , मोहन राकेश के नाटक , प्रेमचन्द की कहानियां , नरेश मेहता आदि साहित्यकारों ने मुझे बहुत कुछ सिखाया है।

अब महत्वपूर्ण व्यक्ति धर्मवीर भारती जी के बारे में कुछ कहना चाहूंगा। दूसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन मॉरिशस में हुआ और उस दौरान यहां की सरकार ने दो लम्बे नाटक – एवम इद्रजीत और बादल तैयार कराया था जिसमें मेरी भी भुमिका थी। मेरा भाई इसके पहले नागपुर में " अन्धा युग " खेला था , जिसमें उसकी भुमिका को खूब सराहा गया। धर्मवीर भारती जी उसे जानते थे खूब भली-भांति । जब यहां नाटक समाप्त हुआ तब भारती जी मंच पर आये सबसे मिले, सबके कार्य की साराहना किये।मेरी ओर भी मुडे और पूछने लगे कि –" तुम हीरामन के भाई हो ?" और हम दोनों के बात –चीत का सिलसिला शुरु हुआ। लगे बातों मैने अपने मन की बात भी उनके समक्ष रख दी। मैने कहा – " सर मैं पत्रकार बनना चाहता हूं।" भारती जी ने कहा कि मुम्बई आ जाओ ट्रेनिग शुरु होने वाली है।

प्र. काव्य के अपने सफरौर संघर्ष के बारेमें कुछ बताएं। साथ ही " कविताएं जो छप न सकीं " काव्य शिर्षक का यथार्थ जानने की उत्कंठा है ।

जवाब : काव्य के संघर्ष का जिक्र थोडा सा तो मैने आपके इसके पहले वाले प्रश्न में कर ही दिया है। जैसा कि पहले ही बताया कि कवि तो मैं 1996 ई. के करीब 15वर्ष पूर्व ही अन सकता था पर सही दिशा और प्रकाशन न हो पाया। "कविताएं जो छप न सकीं" जिसका शीर्षक आपको आकर्षित करता है , इसकी एक दिलचस्प कहानी है। जब एकदो बार मेरी कविताऐं प्रकाशित न हुई तो थोडा सा लगा कि क्या इतना भी स्तर नहीं है क्या मेरे लिखे हुए का? पर कभी कभी किसी से कुछ कहता नहीं अपने तक ही , बस अंतर्मुखी साधनारत रहता। कुछ महीने बीत जाने पर मैने उस को भुला भी दिया और आगे लिखने का कार्य करता रहा। इस बात ने कभी मेरे मनोबल को गिरने नहीं दिया कि मैं अब तक कहीं छपा नहीं। छपास की लालसा तो कभी मन में थी ही नहीं , बस हृदय की अनकही बात कलम पर उतारने का अभ्यस्त था। उस साधना से कभी कोताही नहीं किया आजतक। " कविताएं जो छप न सकीं " इसकी सारी कविताएं मैने अपनी पत्नी के लिए लिखी थीं , वह देवी भी उस सृजन का बहुत सम्मान करती थीं। मेरे जन्मदिवस के अवसर पर प्रति वर्ष उनकी ओर से एक अमूल्य उपहार दिया जाता और 1990 ई. में मेरे जन्मदिन के दिन सुबह ही जो उपहार मुझे धर्मपत्नी से दिया गया वह आज भी मेरे पास सुरक्षित है, मेरी आलमारी में, मेरे घर में , मेरे हृदय में , मेरी स्मृतियों में मेरी हर एक श्वांस में। मेरी हस्तलिखित कविताओं की पाण्डुलीपि को उन्होने हार्ड बाइंड कराके पुस्तकार रूप में मुझे प्रजेंट किया और नाम उन्हीं का दिया हुआ ' कविताएं जो छप न सकीं '। 1996 ई. में जब प्रकाशक ने इस पुस्तक छापने की बात उठाई तब भी मैने नाम में कोई परिवर्तन नहीं किया। मेरे काव्य संग्रह को आप युग्म में भी देखेंगी जैसे – " कविताएं जो छपी नहीं " और " छपकर रहीं कविताएं " , " चुभते फूल " और " हंसते कांटे " आदि।इस प्रकार एक विशेष और थोडा हटकर शीर्षक देने का भी एक शौक है। इन्हीं उतार – चढाव से गुजरते हुए आज आप सबके समक्ष साहित्यकार रूप में पाकर हर्षित होता हूं और अपने लिखे हुए को और अधिक निखारने के लिए प्रयत्न शील रहता हूं।

प्र. मॉरिशस में भोजपूरी की स्थिति कैसी है और क्रिओली का प्रभाव कितना है ?

जवाब : आपको तो पता ही होगा कि जब कई सौवर्ष पूर्व विषम परिस्थितियों में हमारे पूर्वज यहां लाए गए तब अशिक्षित ही थे। यातनाएं ,दर्द , उपेक्षा , अपमान का घूंट पीकर भी उन्होने भोजपूरी को सम्हाले रखा और मॉरिशस को एक पहचान दिलाई है भोजपूरी ने , जिस पर हमें गर्व भी होता है।

अब बात करें आपके प्रश्न की तो मैं यह कहना चाहूंगा कि भोजपूरी की स्थिति अब पहले जैसी नहीं रही। जिस तरह आपके यहां हिन्दी में अंग्रेजी की पैठ जबर्दस्त है और हिन्दी के प्रोफेसर या विद्वान भी अंग्रेजी बोलने में गौरव का अनुभव करते हैं उसी प्रकार यहां भोजपूरी की हालत होती जा रही है। दूसरा यह कि – इस देश में आज जितने भी मठाधीश भोजपूरी के नाम से रोटियां तोड रहे हैं वे सिर्फ अपना उल्लू साधने में लगे हैं , और भोजपूरी के लिए कुछ भी नहीं कर पा रहे। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि जितने भी उच्च पदाधिकारी हैं जो भोजपूरी के क्षेत्र में कार्यरत हैं उनमें से भी कुछ लोग भोजपूरी बोल भी नहीं पाते। काम आप उसी पदासीन आप भोजपूरी के नाम के हैं , अर्थोपार्जन भोजपूरी के नाम से कर रहे हैं , देश – विदेश का भ्रमण भी कहीं न कहीं इसी के द्वारा कर रहे हैं पर उसके विकास के लिए आप नाम मात्र का कार्य कर रहे हैं और यह कहने में न तो मुझे झिझक हो रहा है न

ही संकोच। इस बात का दुख है कि हमारे पूर्वज भाषा की जो थाती इस देश में लाए थे , आजीवन जिससे जुडे रहे वह शनै: - शनै: कहीं लुप्त न होने लगे।

प्र. आप भारत आते रहते हैं। भारत से साहित्यिक लगाव या सांस्कृतिक जुडाव , कौन सी बात अधिक आपको इस देश के प्रति खींचती है ?

जवाब : यह प्रश्न थोडा सा अपूर्ण है , मेरी दृष्टि में। अनुपमा जी भारत मेरे लिए कोई कोई घूमने फिरने की जगह या काव्य गोष्ठी – साहित्यिक संगोष्ठी का केन्द्र नहीं है। आपका यह प्रश्न तो उसी प्रकार होगा कि – मॉ की गोद में आकर कैसा लगता है ? भारत मेरे लिए वन्दनीय है। भारत बस आपका ही देश नही अपितु यह देश है अपनत्व का , यह देश हामारा भी उतना ही है , हमारे पूर्वज यहीं से प्रवंचना के साथ लाए गये थे। आप विश्वास नहीं करेंगी जब भी भारत आता हूं , लैण्ड होते ही इतनी सात्विक भावनाएं , ऐसा उमंग , अन्दरूनी खुशी इतनी तीव्र से तीव्रतम होने लगती है जिसे किसी भी प्रकार उसे मैं शब्दों व्यक्त नहीं कर सकता। बिहार मैं हर बार जाता हूं , वहां गांव में , गलियों में घूमता रहता हूं। ऐसा लगता है कि जैसे मेरी कोई महत्वपूर्ण तलाश पूरी हो गई हो। मेरे दोस्त भी कई लंगोटिया यार हैं , बहुत साथ और समय देते हैं मुझे। एक परम मित्र हैं – ' हरिवंश 'जी जो कि राज्य सभा में स्पीकर हैं , उनके रहते लगता ही नहीं कि मैं अपनों के साथ नहीं हूं। ऐसे और भी कई मित्र हैं जिनके स्नेह से मैं अभीभूत होता हूं। तो आपको अपने प्रश्न में यह भी जोडना था कि – मुझे भारत की मिट्टी का प्रेम ,सांस्कृतिक लगाव या साहित्यिक जुडाव क्या खींचता है ? तब यह पूर्ण होता। भारत की संस्कृति और मॉरिशस की संस्कृति दोनों में साम्यता है। पर्व ,रीति – रिवाज , तिथि – त्यौहार लगभग एक ही हैं अत: कुछ खास अंतर नहीं दिखता। साहित्यिक जुडाव भी बहुत है। आज भारत में मुझे जो पहचान मिली है वह साहित्य सृजन के द्वारा ही प्राप्त है परंतु , उस आत को मैं सबसे अंत में रखता हूं। और अनुपमा जी एक और रहस्य की बात बताना चाहूंगा कि – मैने अब तक दर्जनों किताब लिखीं परंतु मन यही कहता हैकि अभी सीख रहा हूं लिखना।अब शायद मुझे कुछ लिखना आ गया है। तो भारत में मुझे सबसे अधिक खींचती है – उस देश की मिट्टी जिसका रजकण मेरे लिए किसी तिलक से कम नहीं , दूसरा सांस्कृतिक जुडाव जोदोनों देशों को एक सूत्र में ही पिरोये हुए है और तीसरा जिसकी वजह से मुझे भारत में जाना जाता है- साहित्यिक लगाव।

प्र. पत्रकारिता के क्षेत्र में आपका विशेष अनुभव है। ' स्वदेश ', ' वसंत ',रिमझिम' आदि पत्रिकाओं में आपने सम्पादन कार्य भी कियी है। वर्तमान समय में जो पत्रिकाऐ निकल रहीं हैं , उनमें आपकी दृष्टि में उत्कृष्ट पत्रिका कौन – कौन सी है ?

जवाब : जी पत्रकारिता मेरा शौक था और उस क्षेत्र में मैने बहुत कार्य भी किया है। आज भी अच्छी पत्रिकाएं निकल रहीं हैं। भारत से केन्द्रीय हिन्दी संस्थान से अच्छी पत्रिकाएं ' भाषा ' , प्रवासी जगत और गगनांचल , आलोचना, वागर्थ आदि पत्रिकाएं ठीक हैं। मॉरिशस में तो बस वसंत अब भी ठीक – ठाक चल रही है। पर एक बात कहना चाहूंगा कि आज पत्रकारिता और पत्रिका के स्तर में बहुत हद तक ह्रास हुआ है। सम्पादक में भी वह बात नहीं रह गई जो कि पत्रिका को एक विशेष स्तर पर स्थापित कर सकें। पत्रिकाऐ तो हजारों की संख्या में निकल रही हैं परंतु उनका उद्देश्य स्पष्ट नही हो पा रहा और न ही सुधारवादी चिंतन दिखाई देता है। हमारे यहां भी वसंत पत्रिका को ले लीजिये जब मैं उसका सम्पादक था ,रामदेव धुरन्धर जी थे , भोलानाथ जी थे तब एक अलग ही पहचान और कलेवर था। आज भी पत्रिका निकल तो रही है पर मुझे निराशा होती है। इस बात पर भी कि जिस पत्रिका को निज संतान की तरह बढाया , सारा समय दिया , आर्थिक रूप से भी गोपनीय ढंग से उसकी सेवा की यदि उसमें कुछ कमी दिखती है या उसे देखकर मैं संतुष्ट नहीं हो पाता तो दुख होता है।

प्र. अमेरिकी और यूरोपीय देशों देशों की तुलना में मॉरिशस में हिन्दी की लेखिकाऐ और कवयित्रियां कम हैं , इसका कारण आप क्या समझते हैं ?

जवाब : देखिये अनुपमा जी इसके कई कारण हैं। सबसे पहले तो यह जिन देशों की बात आप कर रही हैं जहां लेखिकाएं अधिक हैं , और वे विदेशों में बैठकर लिख रही हैं , ये सब भारत से ही आई हैं , इनका शिक्षा – दीक्षा भारत का ही है। अत: एकाकीपन के दर्द को हल्का करने या शौकियावश या साहित्य साधनावश ये सब लिख रही हैं जिनके लिखे हुए को अधिक मांजने की भी

आवश्यकता नहीं क्योंकि लेखन और साहित्य का सम्बन्ध उनका बचपन से ही है। मॉरिशस में यह बात नहीं। यहां तो संघर्ष से उपर उठकर लोगों ने स्वतंत्र रूप से जीने की कला पहले सीखे हैं। पढने – लिखने का इतना महत्व भी हमारे बडे कम ही समझते थे क्योंकि वे खुद शिक्षा से वंचित थे। मैं अपको एक वाकिया बताऊं कि मुझे पढने – लिखने का शौक बचपन से ही बहुत अधिक था। मेरे चाचा और परिजन इसके खिलाफ थे कि जब बडा होकर कुदाल ही चलाना है तो इतना पढना ही क्यों ? मेरे एक पडोसी थे वे मां के पास आये और बोले –" भौजी रजवा के खूब पढअईह। हमनी आपन देश से तो अलग हो गैनी , जब ई बालक लोग पढिहैं तब गुलामी से दूर होइहैं और हमनी के भी खुशी होई। पढाई खातिर कबहूं न रोकिहौं। " उस पडोसी के समझाने से मेरी मां की आंखें खुलीं और मैं अपना जीवन उन्मुक्त होकर जी पाया। कहने का अभिप्राय है कि शिक्षा और माहौल न मिल पाने के कारण इस देश में अभी लेखिकाओं का पदार्पण कम ही हुआ है पर यह विश्वास है कि शीघ्र ही यह कमी भी दूर होगी। फिरहाल तो कल्पना लाल जी , सुमती बुधीन आदि हैं जो अपने लेखन से साहित्य सेवा कर रही हैं।

प्र.- विगत कुछ वर्षों से प्रवासी साहित्यक के प्रति लोगों का जो अत्यधिक रुझान बढा है ,उसके आधार पर यह कह जा सकता है कि – हिन्दी शीघ्र ही ग्लोबल गांव की कल्पना को साकार करने में सफल होगी ?

जवाब : जी बिल्कुल। हिन्दी के प्रति लोगों की एक जो रुचि बढी है विगत दो दशकों से उसके आधार पर , हिन्दी वैश्विक स्तर पर पहले नम्बर पर स्थापित होने के बहुत करीब है। इस दिशा में प्रवासियों का योगदान सर्वोपरि है। जिस भी देश में वे कार्यरत हैं या स्थायी रूप से वहां के बशिन्दा बन गये हैं ,उस देश में न केवल हिन्दी भाषा अपितु समूची भारतीय संस्कृति को भी फैलाकर रखे हैं। उनका यह कार्य ही हिन्दी के वर्चस्व की बढोत्तरी कर रहा है।

आपका प्रश्न यह भी है कि प्रवासी साहित्य के प्रति लोगों का रुझान अधिक बढ रहा। अब एक बात कहना चाहूंगा यह समझते हुए कि आप और आपके यहां के अन्य लोग कोई इसे अन्यथा नहीं लेगा और लेगा भी तो मुझे इसकी भी परवाह नहीं (फुफ्फा के रिसियाने फुआ नाहीं छूटत।) (खूब ठहाका लगाते हुए)। ऐसा है कि पिछले कुछ दशक से आपके यहां हिन्दी में समूचा साहित्य पढने – लिखने के बजाय उसे टुकडों में पढा- लिखा जा रहा है जिसे विमर्श का नाम दे दिया गया है। अब जब विमर्श पढकर पाठक ऊब रहे हैं तो कुछ नया चाहिए उन्हें। इसमें प्रवासी साहित्य के प्रति उनकी रुचि बढ रही । नया समाज , संस्कृति परिवेश , संघर्ष आदि पढना औए चिंतन करना उन्हें रुचिकर लग रहा है और प्रवासी साहित्य को पढा जा रहा है। हम साहित्यकार भी इससे अभीभूत हैं क्योंकि साहित्यकार को सच्चे साहित्यकार की बात कर रहा हूं कि उन्हें किसी चीज़ की लालसा नहीं होती। सच्चे और इमानदारी से लिखने वाले साहित्यकार को पाठकों के प्रशंसा की भूख् होती है। आपके यहां हमारे लिखे हुए को पढा जा रहा है लोग उसका स्वागत कर रहे हैं , इसी से हमारा लेखन सार्थक हो पा रहा है।